इस्लामी देशों से कुछ सीखेंगे भारतीय मुसलमान ?

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। युगीन आवश्यकता एवं वर्तमान परिस्थिति-परिवेश के अनुकूल परिवर्तन सतत चलते रहना चाहिए। इसी में अखिल मानवता और जगती का कल्याण निहित है। परिवर्तन की यह प्रक्रिया चारों दिशाओं और सभी पंथों-मज़हबों में देखने को मिलती रही है। इतना अवश्य है कि कहीं यह प्रक्रिया तीव्र है तो कहीं थोड़ी मद्धिम, पर यदि हम जीवित हैं तो परिवर्तन निश्चित एवं अपरिहार्य है।

इस्लाम में यह प्रक्रिया धीमी अवश्य है, पर सतह के नीचे वहाँ भी परिवर्तन की तीव्र कामना और बेचैन कसमसाहट पल रही है। इस्लाम एक बंद मज़हब है। वह सुधार एवं बदलावों से भयभीत और आशंकित होकर अपने अनुयायियों पर भी तरह-तरह की बंदिशें और पाबन्दियाँ लगाकर रखता है। इन बंदिशों एवं पाबंदियों के कारण उसको मानने वाले बहुत-से लोग आज खुली हवा, खिली धूप में साँस लेने के लिए तड़प उठे हों तो कोई आश्चर्य नहीं! तमाम इस्लामिक देशों और उनके अनुयायियों के दिल और दिमाग़ में जमी सदियों पुरानी काई आज कुछ-कुछ छँटने लगी है, उनके ज़ेहन के बंद-अँधेरे कोने में सुधार, बदलाव और उदारता की उजली किरणें दस्तक देने लगी हैं। संयुक्त अरब अमीरात और सऊदी अरब जैसे देशों में पिछले कुछ वर्षों में आए बदलाव इसकी पुष्टि करते हैं।

हाल ही में कई इस्लामिक देशों में कुछ ऐसे बदलाव हुए जो सुधार एवं परिवर्तन, उदारता एवं सहिष्णुता, सहयोग एवं समन्वय की उम्मीद जगाते हैं। 2015 में सऊदी अरब में महिलाओं को मत देने का अधिकार सौंपा गया तो पूरी दुनिया में उसकी प्रशंसा हुई। सऊदी अरब सबसे अंत में महिलाओं को मताधिकार सौंपने वाला देश बना। वर्ष 2018 में जब उसने महिलाओं को कार चलाने की इजाज़त दी तो उसकी भी चारों ओर प्रशंसा हुई। ऐसे अनेक सुधार पिछले कुछ महीनों-वर्षों से वहाँ देखने को मिल रहे हैं। चाहे महिलाओं की अकेले यात्रा करने का मुद्दा हो या अपनी रुचि एवं मर्ज़ी के परिधान पहनने का, ये सभी बदलाव इस्लाम के युग विशेष से आगे बढ़ने की ओर संकेत करते हैं। इसमें जो सबसे ताजा एवं उल्लेखनीय बदलाव है- वह है कुछ दिनों पूर्व सऊदी अरब के विभिन्न मस्जिदों पर लगे लाउडस्पीकरों पर नमाज के वक्त ऊँची आवाज़ में दिए जाने वाले अज़ान पर कुछ शर्त्तों और पाबंदियों का लगना।

एक वहाबी विचारधारा वाले देश में ऐसी पाबन्दियाँ एवं शर्त्तें एक युगांतकारी निर्णय एवं घटना है। इसमें भविष्य के उजले संकेत निहित हैं। वहाँ के इस्लामिक मामलों के मंत्री डॉक्टर अब्दुल लतीफ़ बिन

अब्दुल्ला अज़ीज अल-शेख ने अपने आदेश में लिखा- "मस्ज़िदों पर लगे लाउडस्पीकरों का प्रयोग सिर्फ़ धर्मावलंबियों को नमाज़ के लिए बुलाने (अजान के लिए) और इक़ामत (नमाज के लिए लोगों को दूसरी बार पुकारने) के लिए ही किया जाए और उसकी आवाज़ स्पीकर की अधिकतम आवाज़ के एक तिहाई से ज़्यादा न हो।" उन्होंने यह भी लिखा- " इस आदेश को न मानने वालों के ख़िलाफ़ प्रशासन की ओर से कड़ी कार्रवाई की जाएगी।" शरीयत एवं पैग़ंबर मोहम्मद की हिदायतों का हवाला देते हुए उन्होंने आगे कहा- "हर इंसान चुपचाप अपने रब को पुकार रहा है. इसलिए किसी दूसरे को परेशान नहीं करना चाहिए और ना ही पाठ में या प्रार्थना में दूसरे की आवाज़ पर आवाज़ उठानी चाहिए।" सऊदी प्रशासन ने अपने आदेश में तर्क दिया है कि "इमाम नमाज़ शुरू करने वाले हैं, इसका पता मस्जिद में मौजूद लोगों को चलना चाहिए, ना कि पड़ोस के घरों में रहने वाले लोगों को. बल्कि यह क़ुरान शरीफ़ का अपमान है कि आप उसे लाउडस्पीकर पर चलाएँ और कोई उसे सुने ना या सुनना ना चाहे।"

यह सऊदी अरब की सरकार का बिलकुल उचित एवं समयानुकूल फ़ैसला है कि एक निश्चित समय के बाद एवं निश्चित ध्वनि से ऊँची आवाज़ में मस्जिदों पर लाउडस्पीकर न बजाई जाय। कितने बुजूर्ग-बीमार, बूढ़े-बच्चे, स्त्री-पुरुष मस्ज़िदों में बजने वाले लाउडस्पीकरों की ऊँची आवाज़ से अनिद्रा एवं अवसाद के शिकार हो जाते हैं। इससे बच्चों की पढ़ाई में अत्यधिक बाधा पहुँचती है। अलग-अलग शिफ़्ट में काम करने वाले लोग दो पल चैन की नींद नहीं ले पाते। भारत जैसे देश, जहाँ रोज नई-नई मस्ज़िदों की कतारें खड़ी होती जा रही हैं, वहाँ की स्थितियाँ तो और भयावह एवं कष्टप्रद हैं। ऊपर से आए दिन होने वाले जलसे-जनाज़े, धरने-प्रदर्शन, हड़ताल-आंदोलन ने उनके दिन का चैन और रातों की नींद पहले ही छीन रखी है, जो थोड़ा-बहुत सुकून रात्रि के अंतिम प्रहर और भोर की शांत-स्निग्ध वेला में नसीब होती है, मस्जिदों पर बजने वाले लाउडस्पीकर उनसे वह भी छीन लेते हैं। और यदि किसी ने पुलिस-प्रशासन में शिकायत भी की, तो अव्वल तो उसकी शिक़ायत दर्ज ही नहीं की जाती और कहीं जो वह मीडिया के माध्यम से सुखियाँ बन जायँ तो बात दंगे-फ़साद, मार-काट, फ़तवे-फ़रमान तक पहुँच जाती है। शिक़ायत दर्ज कराने वाला या विरोध का वैध स्वर बुलंद करने वाला स्वयं को एकाकी-असहाय महसूस करता है।

कथित बौद्धिक एवं छद्म धर्मनिरपेक्षतावादी वर्ग उसका सहयोग करने के स्थान पर सुपारी किलर की भूमिका में अधिक नज़र आता है। पूरा इस्लामिक आर्थिक-सामाजिक तंत्र (ईको-सिस्टम) हाथ धोकर उसके पीछे पड़ जाता है। पक्ष बदलते ही बहुतों के लिए अभिव्यक्ति के अधिकार के मायने भी बदल जाते हैं। विरोध या शिकायत दर्ज कराने वाले व्यक्ति की सार्वजनिक छवि को येन-केन-प्रकारेण ध्वस्त करने का कुचक्र व षडयंत्र रचा जाता है। कुछ वर्षों पूर्व प्रसिद्ध गायक सोनू निगम एवं अभिजीत भट्टाचार्या या हाल के दिनों में कंगना रनौत को ऐसी ही मर्मांतक पीड़ा एवं यातनाओं से गुज़रना पड़ा है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के संविधान-प्रदत्त अधिकारों का उचित एवं मुद्दा-आधारित उपयोग मात्र करने के कारण उन्हें सोशल मीडिया पर ट्रॉल का भयानक शिकार होना पड़ा, इमामों-मौलानाओं के फ़तवे-फ़रमान का सामना करना पड़ा। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि क़ानून-व्यवस्था से संचालित, संविधान-सम्मत, धर्मनिरपेक्ष देश में कुछ ताक़तवर-मज़हबी लोगों, इमामों-मौलानाओं और समुदायों को "किसी का गला रेतने, किसी को चैराहे पर टाँगने" जैसे अवैधानिक, बल्कि आपराधिक फ़तवे-फ़रमान ज़ारी करने की खुली छूट मिली हुई है। जहाँ ऐसे फ़तवे-फ़रमान ज़ारी करने वालों के विरुद्ध क़ानूनी कार्रवाई

की जानी चाहिए, वहीं क्षद्म धर्मनिरपेक्षता की आड़ में उनके ज़हरीले बयानों, फ़तवे-फ़रमानों का बचाव किया जाता है, खुलेआम किया जाता है, अख़बारों और टेलीविज़न पर आयोजित प्राइम टाइम बहस में किया जाता है।

यदि इस्लामिक देश सऊदी अरब वर्तमान की आवश्यकता, सभ्य एवं उदार समाज की रचना-स्थापना और अपने नागरिकों के सुविधा-सुरक्षा-स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए मस्जिदों में ऊँची आवाज़ में बजने वाले लाउडस्पीकरों पर शर्त्तें और पाबन्दियाँ लगा सकता है तो धर्मनिरपेक्ष देश भारत में ऐसा क्यों नहीं हो सकता ? कुकरमुत्ते की तरह हर गली-चौक-चौराहे-सड़क-बाजार-प्लेटफॉर्म-स्टेशनों-बस अड्डों-सरकारी ज़मीनों पर उग आए मस्ज़िदों और घनी आबादी के कारण यहाँ तो इसकी और अधिक आवश्यकता है।

प्रणय कुमार
9588225950